International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 14-11-2021, Accepted: 28-11-2021, Published: 15-12-2021
Volume 7; Issue 6; 2021; Page No. 77-82

श्रीमद्भागवत गीताः मृत्यु विषाद या हर्ष बेला

नीलिमा[1], डॉ. बृजलता शर्मा[2]

[1] शोद्यार्थी, हिन्दी विभाग, हिमालयन गढ़वाल विश्वविद्यालय, धैड गाँव, शिवनगर, पोखरा, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड, भारत

[2] प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, हिमालयन गढ़वाल विश्वविद्यालय, धैड गाँव, शिवनगर, पोखरा, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड, भारत

सारांश

मानव समाज में मृत्यु के प्रति जो संवेदनशील दृष्टिकोण प्रचलित है, वह पूर्णतया भावनाओं पर आधारित होने के साथ–साथ कुछ हद तक डर,चिन्ता, त्रासदी ,दुख एवं परंपराओं के ताने–बाने में उलझकर रह गया है। जबकि अध्यात्मिक दर्शनानुसार मृत्यु अवस्था वास्तव में अपने आप में एक पृथक अस्तित्व को संजोकर रखने वाली स्थिति है। परंपरा अर्थात किसी भी व्यक्ति के मृत्यु उपरांत की जाने वाली ऐसी सम्पूर्ण प्रक्रिया (विषाद, दुरूख, रोना, चीखना, दान–दक्षिणा, विचार, रीति रिवाज़ और औपचारिकताएं आदि, अर्थात मृत्योपरांत कुछ समय तक अपनाये जाने वाले अनिवार्य नियमों का कठोरता पूर्वक पालन करना।) जिसका आधार किस सत्यता पर निर्भर है और कितना उचित–अनुचित है, यह प्रमाणिकतायुक्त है भी या नहीं; इस विषय पर अपने आप में एक भ्रामक स्थितियों का ताना–बाना बुना हुआ है। इस असमंजस की स्थिति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का श्रेय केवल क्षेत्रीय परंपराओं के प्रभाव और लोभी धर्म–कर्मियों ने अपनी–अपनी इच्छा अनुसार व निराधार पक्षपातपूर्ण मानसिकता का परिचय देते हुए समाज में एक भ्रम की स्थिति को स्थापित कर दिया जो निरंतर जारी है क्योंकि यह मानव जीवन की एक ऐसी महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जो सम्पूर्ण संसार में हर दस कोस की दूरी पर अलग–अलग रूपों में देखने–सुनने को मिलती है। इस पक्षपातपूर्ण और स्वार्थ प्रेरित स्थिति को समाप्त करने के लिए वर्तमान से ही प्रत्येक व्यक्ति को स्वआचरण में सात्विकता का अनुकरण करते हुए परिवर्तन करने से, हमारे साथ जो आने वाली पीढ़ी आज बाल्यवस्था में है, ये ही हमारे भविष्य में आने वाली युवा पीढ़ी बनकर ज्ञान–विज्ञान पर आधारित एवं पुरातन शाश्वत मूल्यों पर आधारित शिक्षाओं को दिन–प्रतिदिन के जीवन–यापन की शैली में अनुकरण कर भ्रामकता को समाप्त करने में सहयोगी व सक्षम होगी। हम सभी को लोक कल्याण हेतु अति आवश्यक कर्तव्यों की श्रेणी में शास्त्रों पर आधारित ज्ञान को आरम्भ से ही शिक्षा पद्धति में सम्मिलित करना होगा। वर्तमान समय में कोरोना वायरस महामारी की विषम परिस्थितियों से भी शिक्षा ग्रहण करते हुए हमें स्वआचरण की शुद्धि द्वारा ही संभवतया मानव जीवन की सार्थकता के विकास में योगदान देने वाले नियमों को ही जीवन में अपनाने का प्रयास करना चाहिए। हमारे अपने जीवन में होने वाले अनुभवों से और समाज में चारों ओर व्याप्त अनेक प्रकार के रीति रिवाजों को लेकर कुछ भ्रमों में से अत्यधिक महत्वपूर्ण भ्रामक प्रश्न है, उनमें से एक महत्वपूर्ण और संवेदनशील प्रश्न है–

'मृत्यु अवस्था वास्तव में हर्षोल्लास का अवसर है या दुःख का अवसर है।'

मूलशब्दः मृत्यु, हर्ष, विषाद, आत्मा, अवस्था, जन्म, पुनर्जन्म, परिवर्तन, चक्रव्यूह

प्रस्तावना

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।

यह आत्मा ना तो किसी काल में जन्म लेती है, ना ही मरती है। यह तो अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है। शरीर के समाप्त हो जाने पर भी यह (आत्मा) समाप्त नहीं होती है। (श्रीमद्भागवत गीता 2/20)

श्रीमद्भागवत गीता अनुसार मृत्यु अवस्था पर विचार–

जिस प्रकार यह देह जिसमें आत्मा स्थित है, वह भी बाल्यवस्था, तरुणावस्था, यौवनावस्था से होती हुई वृद्धावस्था को प्राप्त होती है, उसी प्रकार आत्मा भी एक देह को बदल कर दूसरी देह प्राप्त करती है। (श्रीमद्भागवत गीता 2/13)

इसीलिए ज्ञानी लोग इस देह परिवर्तन की प्रक्रिया पर किसी भी प्रकार का मोह या आसक्ति नहीं रखते हैं । परिवर्तन सृष्टि का शाश्वत एवं अटल नियम है। प्रत्येक प्राणी की देह; जिसमें आत्मा निवास करती है; वह जन्म ,बाल्यवस्था ,तरुणावस्था से रूपांतरित होती हुई वृद्धावस्था को प्राप्त होकर अंत में मृत्यु को प्राप्त होती है। आत्मा एक देह को त्याग कर दूसरी देह धारण करती है; जैसे हम अपने पुराने वस्त्रों को त्याग कर नए वस्त्रों को ग्रहण करते हैं। आत्मा के देह परिवर्तन को विषाद के रूप में देखना मनुष्य की अज्ञानता है। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता में स्पष्ट रूप से समझाया है। हे अर्जुन! भीष्म, द्रोण या दोनों पक्षों में उपस्थित नाना संबंधी गणों के अंत को देखना कोई शोक का कारण नहीं है। प्रत्येक जीव की आत्मा मृत्यु के पश्चात दूसरी देह अवश्य धारण करती है, लेकिन वह दूसरी देह कौन सी होगी यह तथ्य उसके कर्मों के अनुसार निर्धारित होता है। श्री कृष्ण श्रीमद्भागवत गीता में यह भी बताते हैं कि देह परिवर्तन में सृष्टि का प्रारंभ तथा उसमें होने वाले सतत परिवर्तन को एक चक्र की भांति समझा जा सकता है, किंतु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि सृष्टि के जनक परमब्रह्म श्री नाथ भी उसी परिवर्तन के सूत्र में बंधे हैं। परमब्रह्म परमेश्वर इस ब्रह्मांड को मात्र अपने एक अंश के रूप में धारण करते हैं। इसका रहस्योद्घाटन परम प्रभु श्री कृष्ण ने श्रीमद्भागवत गीता के दसवें और ग्यारहवें अध्याय में विस्तार पूर्वक वर्णित किया है।

परंतु इस देह परिवर्तन के रहस्य को समझना और समझाना उतना सरल भी नहीं है । इस रहस्य को समझने के लिए परमात्मा के सानिध्य का परमानंद अनुभव करना अति आवश्यक है अर्थात जब परस्पर विरोधात्मक परिस्थितियां हों, जैसे अति सुख या अति दुख की अवस्था, अधिक गर्मी या सर्दी, ऐसे आवेगो का आना–जाना और फिर उनका महसूस होना उस स्थिति में ही

होता है, जब प्राणी अपनी इंद्रियों की रूची और इंद्रियों के भोगानुरूप अपने जीवन को चलाता है, वहीं दूसरी ओर जो प्राणी अपनी इंद्रियों को नियंत्रित करके परमात्मा को समर्पित भाव के साथ जीवन जीता है ; वह ऐसे सुख–दुख से दूर एक अचल, नित्य परमानंद की स्थिति को प्राप्त होता है, जहां इंद्रियों के विकारों से उत्पन्न बीमारियों से उसकी आत्मा नहीं दुखती है। इसलिए श्री कृष्ण अर्जुन को बोध प्रकाश देते हुए समझाते हैं कि इंद्रियों के स्पर्श–विषय की स्थिति से ऊपर उठो और अपनी इंद्रियों को संयमित करो, जिससे परमात्मा के सानिध्य में वह परम आनंद की अनुभूति को अनुभव कर सके।

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते ।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि।। (श्रीमद्भागवत गीता 2/25)

यह आत्मा अव्यक्त है। इसलिए इसको इंद्रियों से व्यक्त नहीं किया जा सकता है। आत्मा अकल्पनीय है, इसके स्वरूप के संबंध में कल्पना नहीं की जा सकती। आत्मा सदैव अपरिवर्तनीय कही जाती है, इसमें किसी भी प्रयोग के द्वारा किसी भी प्रकार का बदलाव कर पाना संभव नहीं है । अतः इस वास्तविक तथ्य को अच्छी प्रकार जानकर इस आत्मा के विषय में मनुष्य को किसी भी प्रकार का शोक नहीं करना चाहिए।

इसीलिए श्रीमद्भागवत गीता में श्री कृष्ण ने स्पष्ट कहा है–

- इस शरीर के नष्ट होने अर्थात मृत्यु को प्राप्त होने के संबंध में शोक करने का कोई कारण नहीं है।
- आत्मा का परिमाप बाल की अग्रनोक के 10,000 वे भाग से भी सूक्ष्म है। जिसे विश्व के शक्तिशाली से शक्तिशाली सूक्ष्म दर्शी यंत्र द्वारा भी देखा नहीं जा सकता है।
- रूस के वैज्ञानिक कोन्सटेनटिन कोरोटकोव (Konstantin Korotkov)– शरीर को त्यागने की क्रिया के विषय पर अर्थात मृत्यु पश्चात–आत्मा के शोध विषय के अध्ययनकर्ता– अपने कैमरे से उन्नत किर्लियन तकनीक (Kirlian Photography) द्वारा फोटो भी लिया, जिसमें एक नीले रंग की जीवनशक्ति आत्मा के देह छोड़ते समय धीरे–धीरे निकलती हुई प्रतीत होती है। कोरोटकोव के अनुसार , प्राणशक्ति (आत्मा) प्रथमतया नाभि व सिर से शरीर का त्याग करती है तथा हृदय और असंधि से सबसे अंत में निकलती है। कोरोटकोव फेडरल रिसर्च इंस्टीट्यूट ऑफ फिजिकल कल्चर सेंट पीटरबर्ग के निदेशक रहे हैं तथा उनकी किर्लियन फोटोग्राफी तकनीक से कोई भी व्यक्ति अपने शरीर का प्रभा–मंडल (Aur) देख सकता है ।
- पश्चिमी जगत् में पुनर्जन्म में विश्वास भले ही नहीं किया जाता है किंतु इस संबंध में कई शोध अवश्य किए जाते रहे हैं। लेबनान (Lebanon) की एक लड़की ने अपने पूर्व जन्म में अपने 26 व्यक्तियों से संबंधों की याददाश्त का विवरण (Physchiatrist Dr- Ian Stevenson) मनोचिकित्सक ईयान स्टीवेंसन की पुस्तक 'Twenty Cases Suggestive of Reincarnation' में दिया है। जबकि 'American Journal of psychiatry' इन वृत्तांतो का परीक्षण कर निष्कर्ष निकालते हुए ऐसी किसी भी प्रकार की संभावनाओं से इनकार नहीं किया है। डॉक्टर स्टीवेंसन (Dr- Stevenson- former Prof-Of Psychiatry] University of Virginia School of Medicine) ने 'Journal of scientific exploration' में शरीर में जन्मजात पाए जाने वाले चिन्हों व घावों के संबंध में कहा है कि 49 में से 43 मामलों में मेडिकल प्रपत्रों में पोस्टमार्टम रिपोर्ट में उल्लिखित शरीर के घाव व चिन्ह पुनर्जीवित व्यक्तियों के शरीर पर भी पाए गए। उन्होंने लगभग 40 वर्ष पुनर्जन्म के शोध विषयों पर अध्ययन में लगाए थे।
- 1989 में रूस के एक भूतल वैज्ञानिक डॉक्टर आजाकोव (Dr- Azzacove) के निर्देशन में रूस के साइबेरिया क्षेत्र में एक वैज्ञानिकों के दल ने पृथ्वी में लगभग 9 मील गहरा एक छेद किया तो नीचे से इस उस शोध दल के सदस्यों को कुछ आवाजें–चीखें सुनाई दीं । विस्मय में पड़कर उन्होंने एक ऐसे माइक्रोफोन का इस्तेमाल किया, जो अत्यधिक गर्मी सहन कर सकता था, तथा उसको अत्यंत संवेदनशीलता को माप सकने वाले संयंत्रों के साथ उस नौ मील गहरे बोरवेल में डाला तो उन्होंने नीचे से अत्यंत क्रंदन व रूदन की आवाजें सुनीं, जिन्हें उन्होंने रिकॉर्ड भी किया। उस शोध दल को यह तथ्य भी पता चला कि धरती के उस नौ मील गहरे छेद के नीचे का तापमान 2000 डिग्री फॉरेनहाइट (°F) से भी ज्यादा था। इस शोध के तथ्यों एवं परिस्थितियों से उन्हें यह अनुभव हुआ कि संभवतः उन्होंने नर्क में कोई छेद कर दिया है।
- भौतिक वैज्ञानिकों के अनुसार– भौतिक पदार्थ से प्रत्येक पल अनेकानेक प्राणियों की उत्पत्ति एवं विनाश होता रहता है, इसलिए आत्मा यदि एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर को धारण ही नहीं करती है तथा उसका कोई पुनर्जन्म नहीं होता है, तो मृत्यु पर शोक करने की क्या आवश्यकता है।

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृत्युस्य च ।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।। (श्रीमद्भागवत गीता 2/27)

जिस जीव ने जन्म लिया है उसकी मृत्यु होना ध्रुव के समान सत्य है। उसी प्रकार जिस जीव की मृत्यु हो गई है, उसका जन्म लेना भी ध्रुवीय अटल सत्य है। इसलिए इस अपरिहार्य तथ्य को अनदेखा कर उसके विषय में दुख मनाना कदापि उचित नहीं है।

अध्ययन क्षेत्र

इस विषय के अध्ययन के लिए कोई भी व्यक्ति अपने आसपास और अपने पूर्वजों की मृत्यु के समय होने वाली परिस्थितियों का आकलन, विचार व मूल्यांकन करके समझने का प्रयास कर सकता है। आज कोरोना की महामारी में होने वाली अनगिनत लोगों की मृत्यु होने पर इस विषय का अध्ययन करने के लिए कहीं दूर जाने की आवश्यकता ही नहीं है। वर्तमान में दिन–प्रतिदिन हो रही महामारी की वजह से मृत्यु एक ऐसा रूप ले चुकी है, जिसे शायद शब्दों में पिरो कर लिखना बहुत ही कठिन कार्य है । परंतु अध्यात्मिक दर्शनानुसार अवलोकन करें तो मृत्यु कभी–कभी हर्ष बेला का भी आभास कराती है। साधारण से साधारण व्यक्ति इन सभी तथ्यों को व्यक्तिगत अनुभवों पर आधारित ज्ञान द्वारा मृत्यु पल को यदि समझना चाहे तो वह भी समझ सकता है– जैसे यदि कोई व्यक्ति कई वर्षों से बीमार है, अपाहिज है, दूसरे पर आश्रित है तो उसकी मृत्यु हो जाना उसकी गति होने के समान है अर्थात कोई भी विषाद की भावनाओं से उस मृत्यु को नहीं देखेगा । यह तो एक साधारण मनुष्य की मानसिक अवधारणा का परिचय रखने वाले विचारों के आधार पर आकलन हुआ, परंतु जो स्थिर बुद्धि का व्यक्ति है वह तो श्रीमद्भागवत गीता में वर्णित ज्ञान के आधार पर मृत्यु अवसर पर कभी भी किसी भी दृष्टिकोण से विषाद भाव को महसूस नहीं करेगा। ज्ञानी पुरुष तो विषम से विषम परिस्थिति में भी समानता के भाव को अपनाते हुए सदैव अपने जीवन पथ पर अग्रसर रहते हैं।

श्रीमद्भागवत गीता में वर्णित मृत्यु अवस्था पर अध्ययन और वास्तविकता के आधार पर विभिन्न आयामों से मूल्यांकन, सभी भ्रामक स्थितियों का प्रत्यक्ष रूप और उदाहरण सहित बार–बार

श्रीकृष्ण ने स्वयं अर्जुन को असमंजसता की स्थिति से उबारने का प्रयास करते हुए कुरूक्षेत्र के युद्ध मैदान में किया और मानव जीवन मूल्यों को अनंत काल तक स्थापित करने में सहायक गीता ज्ञान को विस्तृत रूप में वर्णित किया है। महाभारत में कुरुक्षेत्र के धर्म–अधर्म के बीच महायुद्ध को अनेक शांति प्रयासों के बावजूद भी जब टाला नहीं जा सका था तथा न्याय एवं धर्म की स्थापना के लिए, आततायियों का अंत अपरिहार्य हो गया था। तब सच्चे क्षत्रिय का कर्तव्य–धर्म न्याय के लिए युद्ध करना श्रेष्ठतम उपाय बताकर ही, श्री कृष्ण ने अर्जुन को समझाया था। इसमें स्वजनों और गुरुओं की मृत्यु का शोक करना व्यर्थ था, क्योंकि आत्मा सत्य व सनातन है। जिसने जन्म लिया है, वह मृत्यु को आवश्यक रूप से प्राप्त होगा तथा जिसकी मृत्यु हुई है, वह भी अपने कर्मों व संस्कारों के अनुसार दोबारा शरीर धारण करेगा । यह ध्रुव और अटल सत्य है। इसीलिए अर्जुन का संताप खोखली किंकर्तव्यविमूढ़ता व अज्ञानता को दर्शाता है। ठीक इसी प्रकार सृष्टि के सभी प्राणी प्रारंभ में शरीर धारण करने से पहले अव्यक्त व अप्रकट स्थिति में रहते हैं तथा शरीर को धारण करने पर व्यक्ति स्थिति में आ जाते हैं; साथ ही मृत्यु होने पर पुनः अव्यक्त हो जाते हैं। इसलिए यह विषय वास्तव में एक शाश्वत जीवन प्रक्रियाओं का चक्र है, अतः शोक करने हेतु प्रासंगिक नहीं है। (श्रीमद्भागवत गीता 2/28) सम्पूर्ण संसारिक गतिविधियों पर आधारित ज्ञान, हम और हमारे आसपास में रहने वाले लोगों के अनुभवों के आधार पर अध्ययन का एक प्रयास ।

उद्देश्य

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं हम शोचितुमर्हशी।।

हे भारत ! से भारतवंशी अर्जुन ! प्राणी मात्र के इस भौतिक शरीर में, हर एक जीव की देह में, यह शाश्वत आत्मा उपस्थित है, जो अवध्य है । इस शरीर में रहने वाली आत्मा का नाश नहीं किया जा सकता । इसलिए किसी जीव की मृत्यु होने पर किसी भी प्रकार के किसी शोक–संताप की आवश्यकता ही नहीं है। (श्रीमद्भागवत गीता 2/30)
वस्तुतः आत्मज्ञान का विषय अत्यंत गूढ़ प्रकृति का है। आत्मा को बाल के अग्रभाग के 10,000 वें हिस्से से भी सूक्ष्म बताया गया है। वह इतनी न्यूनत्तम है कि शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शी यंत्रों से भी नहीं देख सकते, फिर भी उसकी व्यापकता एवं उपस्थिति सर्वत्र व्याप्त है । इसलिए सामान्य जन के लिए आत्मा एक चमत्कारिक आश्चर्य का विषय है– देखने, सुनने, व बताने में भी आश्चर्य तथा समझाने पर भी आश्चर्य। श्री कृष्ण कहते हैं कि सिर्फ तत्वदर्शियों ने ही इस आत्मा को देखा व समझा है। इसलिए आत्मा को समझने के लिए तत्वदर्शी की दृष्टि आवश्यक होती है, भौतिक विज्ञान शास्त्रों की दृष्टि से आत्मा के दर्शन संभव नहीं।

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः ।
जन्मबंधविनिर्मुक्ताः पदम् गच्छन्त्यनामयम् ।। (श्रीमद्भागवत गीता 2/51)

इस प्रकार संमत्व बुद्धियुक्त कर्मयोग के द्वारा ज्ञानी पुरुष कर्मों के फल के प्रति आसक्ति छोड़कर जन्म–मृत्यु के दुखदायी चक्र से मुक्त हो जाते हैं तथा परमेश्वर के अमृत–तुल्य परमधाम प्राप्ति के योग्य बन, उसे प्राप्त करते हैं। इसी विधि के द्वारा बड़े–बड़े मनुष्यों, योगियों, ऋषि–मुनियों ने निष्काम बुद्धि–कर्म योग के द्वारा परमात्मा का सायुज्य (परमात्मा में मिल जाना) प्राप्त किया है।

मनुष्य सदैव जिस भाव का चिंतन–मनन करता है, अंतकाल (मृत्यु समय) में भी प्राय उसे उसी भाव का स्मरण हो आता है। मनुष्य के अंतिम समय (मृत्यु समय) में ईश्वर स्मरण का अकाट्य महत्व है। किंतु इससे कोई यह न समझ लेना कि ईश्वर का नाम अंतिम समय में लेने मात्र से ही काम चल जाएगा, क्योंकि जो भाव व चिंतन जीवन भर मन में चलता रहता है, वही मृत्यु–काल में भी छूटता नहीं है। अतः मनुष्य को अपने आचरण व प्रत्येक कर्म से सदैव परमात्मा के सानिध्य को प्राप्त करने का एकमात्र अंतिम लक्ष्य निर्धारित करके ही इस जीवन की सार्थकता को बनाए रखने में प्रयासरत रहना चाहिए । यही प्रत्येक मानव का एकमात्र अंतिम उद्देश्य अपने जीवन काल में होना चाहिए।
छांदोग्य उपनिषद में भी वर्णित है–यथा क्रतुरश्मिंलोके पुरुषो भवति तथेतः प्रेत्य भवति। (3.14.1) अर्थात इस लोक में मानव के द्वारा जैसे कर्म, कृत्य अर्थात संकल्प होते हैं, मरणोपरांत उसे वैसी ही गति मिलती है।
प्रश्नोपनिषद में भी उल्लेख आया है––यच्चित्तस्ते नैश प्राण मायाति प्राणस्तेजसा युक्तारू सहात्मना तथासंकल्पितं लोकं नियति। (3.10) अर्थात मृत्यु काल में आत्मा का जैसा भाव व संकल्प होता है, मन अंतिम क्षण में जिस भाव का चिंतन करता है, उस संकल्प के सहित मन, इंद्रियों को साथ लिए हुए मुख्य प्राण में स्थित हो जाता है। यह मुख्य प्राण उदान वायु से मिलकर अपने सहित; मन और इंद्रियों से युक्त; जीवात्मा को उस अंतिम संकल्प के अनुसार यथा योग्य भिन्न–भिन्न लोकों अथवा योनियों में ले जाता है। अतः मनुष्य को यथेष्ट है कि अपने मन में निरंतर एक ही भगवान का चिंतन करें अन्य कोई दूसरा संकल्प ना आने दे क्योंकि जीवन अल्प और अनित्य है, न जाने कौन सा पल इस जीवन का अंतिम पल हो। (श्रीमद्भागवत गीता 8/6)

श्रीमद्भागवत गीता पर आधारित मृत्यु अवधारणा

- प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के लिए जीता है । यह जो शारीरिक और नश्वर संबंध है (पिता, पुत्र, पत्नी, भाई–बहन, संतान) देह नष्ट होते ही संबंध भी समाप्त हो जाता है। (श्रीमद्भागवत गीता 2/16)
- अतः मनुष्य को मोह, कर्तव्य, दायित्व और संबंधों से भरा ये जीवन सफर विवेकपूर्ण तरीके से ही जीना चाहिए।
- श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन! यह आत्म–तत्व की जो ऊर्जा है, वही प्राण बनकर समस्त जीवों के शरीरों में विद्यमान रहती है। यह सदैव शाश्वत बनी रहती है। आत्मा कभी नहीं मरती, यह तो सिर्फ चोला, कपड़े, वस्त्र, बदलती है, अर्थात शरीर रूपी इस श्रंखला में आत्मा सिर्फ चोला (कपड़े) बदलती है। (श्रीमद्भागवत गीता 2/19,20,21,22)
- अतः दिव्यज्ञान, अध्यात्मिक दर्शन जब भी मनुष्य को प्राप्त हो जाएगा तो वह सुख–दुख और विषाद की भावना से मुक्त हो जाएगा। मनुष्य के लिए समय–समय पर भ्रम की स्थितियां उत्पन्न होती रहती है अर्थात जब व्यक्ति उस वस्तु के लिए दुख मनाता है, जो वस्तु वास्तव में उसकी होती ही नहीं है । प्रत्येक जीव केवल थोड़े से दिनों के लिए शरीर रूप में प्रकट होता है अतःइस प्रकार देह परिवर्तन का दुख मनाना उचित नहीं है । क्या इसी प्रकार हम अपने किसी पुराने वस्त्र के लिए भी शोकाकुल हो रुदन करने हैं ? अतः मनुष्य को अपने दिव्य व आंतरिक चक्षुओं को खोलना अति आवश्यक है। (श्रीमद्भागवत गीता 2/28)
- अविवेकी लोग वर्तमान और अतीत में जीवन भर इस शरीर के सुख के लिए ही अत्याचार और दुर्व्यवहार करते रहते हैं, भविष्य की कल्पनाओं और योजनाओं में भी देह को सुखी बनाने वाली गतिविधियों पर ध्यान केंद्रित करने में लगे रहते हैं । परंतु जो विवेकशील व्यक्ति हैं, वह इस नश्वर शरीर के

अंत के लिए भी शोक में नहीं डूबते हैं । जो यह जानते हैं कि मनुष्य जन्म से पूर्व भी अव्यक्त था और मृत्यु के उपरांत भी अव्यक्त ही रहेगा। (श्रीमद्भागवत गीता 2/28)

- समाज में फैल रहे अनाचार, दुराचार को नष्ट करने के लिए और झूठी परंपराओं का नाश करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति अपनी–अपनी सामर्थानुसार सहयोग देकर मानव धर्म का पालन करे, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपने ही कर्मों से बंधा हुआ है और वर्तमान में किए गए कर्मों के आधार पर ही अगले जन्म का चोला (शरीर) प्राप्त होता है। मनुष्य द्वारा किए गए कर्मों का बंधन ही जन्म–जन्म का बंधन यदि कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी । (श्रीमद्भागवत गीता 2/31)
- वर्तमान में जीना और वर्तमान परिस्थितियों में किया गया कार्य ही प्रत्येक मनुष्य का अपना कर्म है अर्थात मनुष्य को चाहिए कि वह सिर्फ अपने कर्मों के अधिकार क्षेत्र पर ही ध्यान देते हुए विवेकशीलता का प्रयोग कर, निष्काम भाव द्वारा जीवन मूल्यों को आचरण में समाहित करने का प्रयास करे। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किया गया यही प्रयास इस मनुष्य लोक के कल्याण हेतु मानव जीवन मूल्यों को स्थापित करने में उपयोगी कदम साबित होगा। जिससे समाज में जो भ्रमित स्थिति पैदा हो गई है, उसे समाप्त किया जा सकता है। अतः वास्तविक ज्ञान की अलौकिक ज्योति को निस्वार्थ भाव से प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा ज्वलित करना अनिवार्य है।
- सर्वविदित है कि प्रकृति नियमों पर आधारित है, यह सारा ब्रह्मांड उन्हीं निर्धारित नियमों की धूरी के अनुरूप ही चलता है । उन नियमों में हम कोई बदलाव नहीं ला सकते हैं । हम साधारण व्यक्ति इन नियमों पर कोई नियंत्रण भी नहीं रख सकते हैं। उदाहरण स्वरूप जैसे मनुष्य जन्म लेता है, फिर धीरे–धीरे बड़ा होता है और एक दिन अंततः बूढ़ा हो कर मृत्यु का वरण करता है।
- प्रत्येक मनुष्य को भली–भांति ज्ञात है, हर्षोल्लास बेला क्यों, कब और किन कारणों से प्राप्त होती है, यह तो सभी लोग जानते हैं, परंतु मृत्यु पर हर्ष, उल्लास या दुरूख, मृत्यु उचित–अनुचित है या नहीं; यह तो सिर्फ मनुष्य की अपनी चेतना पर ही निर्भर करता है। इस महत्वपूर्ण तथ्य को मात्र सुनकर ही, वास्तविकता को बिना समझे ही मनुष्य दुखी क्यों होता है, और ना ही इस तथ्य को निष्पक्ष रुप में जानने का कोई प्रयास करता है । इस विषय पर चिंतन–मनन अवश्य करना होगा, क्योंकि इस विषय को प्रतिदिन व निरंतर चल रही दैनिक शिक्षा के अंतर्गत भी कोई विशेष रूप में स्थान नहीं दिया गया है जबकि वास्तव में मृत्यु अटल और सत्य है।ृ जन्म मिथ्या हो सकता है परंतु मृत्यु एक अटल सत्य है।ृ यदि मनुष्य के दुख के कारणों को हम सत्यता की कसौटी पर निष्पक्ष समझ सकते हैं, तभी शायद संभव है कि मृत्यु हर्ष या विषाद बेला है। इस तथ्य को भी निष्पक्ष रुप से समझा जा सकता है और समाज को भी समझाया जा सकता है। मनुष्य दुखी क्यों होता है कुछ तथ्यों पर प्रकाश डालने का प्रयास करते हैं। तब शायद मृत्यु समय एक हर्ष या विषाद बेला है, इस तथ्य को समझना सरल हो जाए ।

मनुष्य दुखी क्यों होता है?

1. जब मनुष्य को इच्छा अनुसार फल की प्राप्ति नहीं होती है तो वह दुखी हो जाता है।
2. मनुष्य यह भूल जाता है कि उसे केवल कर्म (कर्तव्य) करने का ही अधिकार प्राप्त है । कर्मों के फलों का अधिकार तो सर्वशक्ति रूप परमात्मा के अधिकार क्षेत्र में ही है।(श्रीमद्भागवत गीता 2/47)
3. मनुष्य की बुद्धि जब असमंजस में पड़ जाती है तो उसे पाप और पुण्य में अंतर नहीं दिखाई देता है। वह विवेक हीन हो जाता है। अतः मनुष्य को पहले अपनी बुद्धि को स्थिर कर सदैव नैतिक नियमों के अनुसार आचरण करते हुए स्वयं का जीवन व्यतीत करना चाहिए।
4. व्यक्ति को सर्वप्रथम अपने मन को वश में करना चाहिए, तभी वह दुखी होने से बच सकता है।
5. संगत का असर सदैव हमारे मन पर प्रभाव डालता है। श्री कृष्ण कहते हैं– संगति जैसी होती है वैसी ही मनुष्य की आचरण स्थिति और व्यवहारिकता प्रभावित होती है। इसलिए सदैव सद्पुरुषों की संगति में ही रहना चाहिए। (श्रीमद्भागवत गीता 2/62)
6. इंद्रियों को भोग चाहिए और इसी भोग से काम और उत्तेजना की उत्पत्ति होती है । मानव प्रकृति के अनुसार काम में रुकावट आने पर क्रोध उत्पन्न होता है। इंद्रियों पर नियंत्रण संगति के द्वारा ही संभव है अर्थात जैसे लोगों के साथ उठोगे, बैठोगे या रहोगे तो वैसा ही भाव मन में उत्पन्न होता है। जैसे–

संतों की संगति से –झ भक्ति, लड़के और लड़कियों की संगति से –झ मन में काम के भाव उत्पन्न होते हैं । आजकल अक्सर एक तरफा प्रेम कहानी देखने– सुनने को भी मिल जाती है। परंतु धर्म व अध्यात्म के लिए व्यक्ति को अकेला ही रहना पड़ता है, यह तथ्य सर्वविदित है।

श्रीमद्भागवत गीता में मृत्यु और मृत्यु उपरांत जन्म (पुनर्जन्म) को भी विस्तार पूर्वक वर्णित किया गया है । अर्जुन ने श्री कृष्ण से पूछा हे केशव !अनन्य भक्ति (जिस भक्ति में परमात्मा के सिवाय अन्य किसी का भी स्मरण ना करते हुए सिर्फ और सिर्फ परमात्मा से संबंध हो जाए तो वह अनन्य भक्ति कहलाती है) करने वाला पुरुष भी कब तक पुनर्जन्म की सीमा में बंधित है और कब वह पुरुष पुनर्जन्म का अतिक्रमण कर जाते हैं (श्रीमद्भागवत गीता 8/22)

श्री कृष्ण कहते हैं, हे अर्जुन ! जिस काल में शरीर त्याग कर गए हुए योगीजन पुनर्जन्म को नहीं पाते और जिस काल में शरीर को त्यागने पर पुनर्जन्म पाते हैं, मैं अब उस काल का वर्णन करता हूं।(श्रीमद्भागवत गीता 8/23)

मृत्यु समय अर्थात शरीर संबंध का त्याग करते समय जिन के समक्ष ज्योतिर्मय अग्नि जल रही हो, दिन का प्रकाश फैला हो, सूर्य चमक रहा हो, शुक्ल पक्ष का चंद्र बढ़ रहा हो, उत्तरायण का निरभ्र और सुंदर आकाश हो, उस काल में प्रयाण करने वाले ब्रह्मवेत्ता योगीजन ब्रह्म को प्राप्त होते हैं।(श्रीमद्भागवत गीता 8/23)

- अग्नि– ब्रह्म तेज का प्रतीक।
- दिन– विद्या का प्रकाश।
- शुक्ल पक्ष– निर्मलता का द्योतक।
- विवेक, वैराग्य, शम, दम, तेज और प्रज्ञा यह छः आश्वर्य ही षण्मास है।
- उत्तरायण– ऊर्ध्वरेता स्थिति।

प्रकृति से सर्वथा परे इस अवस्था में जाने वाले ब्रह्मवेत्ता योगीजन ब्रह्म को प्राप्त होते हैं ,उनका पुनर्जन्म नहीं होता; किंतु किसी दूसरे चित्त से लगे हुए योगीजन यदि इस अलौकिक स्थिति को प्राप्त नहीं कर पायें या जिनकी साधना अभी तक इस शरीर यात्रा में पूर्ण नहीं हुई है तो उनका मृत्यु उपरांत क्या होता है ? (श्रीमद्भागवत गीता 8/24)

इस प्रश्न पर श्री कृष्ण कहते हैं

जिसके प्रयाणकाल में धुआं फैल रहा हो, योगाग्नि हो (अग्नि यज्ञ– प्रक्रिया में पाई जाने वाली अग्नि का स्वरूप है।) किंतु धुएँ से आच्छादित हो, अविद्या की रात्रि हो, अंधेरा हो, कृष्ण पक्ष का

चंद्रमा क्षीण हो रहा हो, कालिमा का बाहुल्य हो, षड्विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर) से युक्त दक्षिणायन अर्थात बहिर्मुखी हो (जो परमात्मा के प्रवेश से अभी बाहर है।) उस योगी को फिर दोबारा से अर्थात पुनः जन्म लेना पड़ता है। तो क्या वर्तमान समय में शरीर के साथ अर्जित उस योगी की साधना भी मृत्यु के साथ ही नष्ट हो जाती है?(श्रीमद्भागवत गीता 8/25)

इस प्रश्न पर योगेश्वर श्रीकृष्ण उत्तर देते हैं

सृष्टि में शुक्ल और कृष्ण दोनों प्रकार की गतियां शाश्वत और अटल है अर्थात साधन का कभी विनाश नहीं होता है। एक (शुक्ल) अवस्था में प्रयाण करने वाला पीछा न आने वाली परमगति को प्राप्त होता है तो दूसरी (कृष्ण) अवस्था में जिसमें क्षीण प्रकाश तथा अभी तक कालिमा उपस्थित है। ऐसी अवस्था को प्राप्त हुआ पीछे को लौटता है अर्थात पुनर्जन्म लेता है। जब तक उसे पूर्ण प्रकाश नहीं मिलता तब तक उसे भगवान का भजन अवश्य ही करना होता है। (श्रीमद्भागवत गीता 8/26)

मृत्यु और मृत्यु उपरांत जन्म दोनों तथ्यों का श्रीमद्भागवत गीता के आधार पर ध्यान पूर्वक मूल्यांकन करने के बाद, मृत्यु विषाद या हर्ष बेला इस तथ्य को वास्तविकता और शास्त्रों के प्रकाशनुसार यह कहना ज्यादा उचित है कि मनुष्य को अपने विवेक का प्रयोग सदैव करते रहना चाहिए और विवेकानुसार मृत्यु बेला को यदि हर्षोल्लास की बेला बनाने का प्रयास किया जाए जो जितना कहने में तो आसान है परन्तु वास्तव में वर्तमान समाज की स्थिति को देखते हुए यह ज्ञानोदय कार्य उतना सरल भी नहीं है। साथ ही दुख की परंपरा के रूप में जो मान्यता इस समाज में कई सौ वर्षों से स्थापित कर दी गई है, जिसके कारण मनुष्य मोह–माया के इस भंवरजाल से दुख की भावना को समाप्त करने में असफल हो गया है, समाज में वास्तविक ज्ञान–विज्ञान आधारित शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए (पुराने वस्त्रों को त्याग कर नए वस्त्रों को धारण करने समान) पुराने निराधार स्थापित नियमों के प्रति जागृति अनुष्ठानों को आयोजित करने की आवश्यकता है। इस अनुष्ठान में सर्वश्रेष्ठ और महत्वपूर्ण योगदान शिक्षा उपकरण द्वारा ही संभव है। हमारे जीवन में प्रारंभिक शिक्षा (बाल्यकालीन शिक्षा) का प्रभाव (नैतिक मूल्यों और शाश्वत शिक्षा का प्रभाव) जीवनपर्यंत मनुष्य के आचरण में समाहित रहता है। अतः शाश्वत नियमों की शिक्षा यदि बालक को बाल्यकाल से ही दे दी जाए तो शायद समाज में असमंजस और दुख की संभावनाएं पहले–पहल कम होते–होते फिर धीरे–धीरे समाप्ति की ओर अग्रसर हो जाएगीं । अनुमान लगाया जा सकता है कि अध्यात्मिक आधारित शिक्षोपरांत इतनी संभावना तो अवश्य है कि मृत्यु अवस्था पर यदि कोई हर्षोल्लास की स्थिति को भी नहीं अपनाएगा तो विषाद अवस्था को भी नहीं अपनाएगा और इस (मृत्यु बेला) स्थिति में सामान्य रहने का प्रयास सभी लोग अवश्य करने लगेंगे। जो धीरे–धीरे समाज में एक मान्यता और परंपरा के रूप में स्थापित होकर विषाद की अवस्था को समाप्त कर देगा। जीवन के शाश्वत नियमों को तो सभी मानते हैं, परंतु समाज में चारों तरफ मृत्यु को एक दुखी अवस्था के रूप में स्थापित कर दिया गया है। शास्त्रों में उल्लेखित है कि जब भी हम किसी नये वस्त्र को पहनते हैं तो कितना खुश होते हैं, तो मृत्यु भी एक नए वस्त्र को धारण करने से पहले की प्रक्रिया का ही एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। परंतु समाज में ज्ञान के अभाव के कारण और भ्रांतियों के प्रभाव के चलन से मृत्यु अवस्था को दुख की घड़ी के रूप में प्रतिपादित कर दिया गया है। थोड़ा सी समझ–बूझ और प्राचीन ग्रंथों में वर्णित शिक्षा को यदि मनुष्य अपने दिन–प्रतिदिन के आचरण में समावेश कर जीवन यापन करे तो मृत्यु के इस हर्ष और विषाद के चक्रव्यूह से बाहर निकला जा सकता है। यह तो तय है कि ज्ञान अर्जित करने के बाद मनुष्य की बौद्धिक क्षमता में शत–प्रतिशत परिवर्तन देखने को मिलेगा, भले ही इस परिवर्तन का स्तर कुछ कम–ज्यादा हो सकता है, परन्तु ज्ञानोदय पश्चात मनुष्य मृत्यु अवस्था में भी समान्य व्यवहार को अपनाते हुए परिवार एवं सम्बद्धियों को भी सामान्य व्यवहार के अनुकरण पर बल देने का प्रयत्न अवश्य करेगा।

निष्कर्ष

मनुष्य दुखी होने के वास्तविक कारणों से यदि भली–भांति परिचित हो जाए और अध्यात्मिक आधार पर जानने–समझने का प्रयास करे तो वह मृत्यु जैसी अवस्था पर भी हर्ष और विषाद के चक्रव्यूह में से बाहर निकल सकता है।

आजकल प्रत्येक व्यक्ति इतना अधिक परेशान, दुखी, पीड़ा ग्रस्त और अशांत सिर्फ इसलिए है कि मनुष्य मूल स्थान से भटक गया है। मूल स्थान अर्थात् ष्परमात्मा सानिध्यष्। हमारी शिक्षा प्रणाली भी सिर्फ और सिर्फ भौतिक सुख साधनों को अर्जित करने के लिए केंद्रित होकर रह गई है । जबकि प्राचीन काल में शिक्षा प्रणाली मनुष्य के वास्तविक जीवन को भी प्रभावित करने वाली थी।

मनुष्य अपना प्रत्येक कार्य परमात्मा की सेवा समझकर और पूरे समर्पण भाव से करे, तो वह महाशांति और सुख को प्राप्त करता हुआ विषाद मुक्तिबोध को भी प्राप्त कर लेता है। श्री कृष्ण कहते हैं कि मनुष्य संसार में सुख प्राप्त करने के चक्कर में निरंतर प्रयत्नशील रहता है; लेकिन सुख–दुरूख के चक्रव्यूह से वह तभी बाहर निकल सकता है ,जब वह संयमपूर्वक अपनी इंद्रियों को वश में करे और वास्तविक मानव जीवन की सार्थकता को समझ कर जीवन यापन करता रहे। वस्तुतरू श्री कृष्ण ने आत्मा के श्अस्तिश एवं श्नास्तिश दोनों ही पक्षों पर प्रकाश डालते हुए उसकी प्रकृति व तत्वों का विश्लेषण करते हुए अनंत, अधिकारी व अविनाशी आत्मा और शरीर का वर्णन श्रीमद्भागवत गीता में विस्तार पूर्वक किया है। अतः श्री कृष्ण ने श्रीमद्भागवत गीता में मृत्यु विषय पर विस्तार पूर्वक वर्णन किया है।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि ग्रहणाति नरोऽप राणि।
तथा शरीराणि विहाय जिर्णान्यन्यानि सन्याति नवानि देही।।

जिस प्रकार मनुष्य अपने पुराने वस्त्रों को त्याग कर दूसरे नए वस्त्रों को ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीर को त्याग कर नये शरीरों को प्राप्त होता है। (श्रीमद्भागवत गीता 2/22)

अतः आत्मा के देह परिवर्तन को विषाद के रूप में देखना मनुष्य की अज्ञानता ही है।

संदर्भ सूची

1. ब्रह्मपुराण का समीक्षात्मक अध्ययन (1997) कमलेश, दिल्ली विश्वविद्यालय, संस्कृत विभाग।
2. विष्णु पुराण का साहित्यिकअध्ययन (1990) श्रीमती भूपेश धीमान, दिल्ली विश्वविद्यालय, संस्कृत विभाग।
3. आस्तिक दर्शनों में प्रतिपादन मीमांसा सिद्धांत (1987) भुवनेश गौतम, दिल्ली विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग।
4. श्रीमद्भागवत पुराण– गीता प्रेस गोरखपुर
5. श्रीमद भगवत गीता– तत्व विवेचनी (हिंदी– –टीका), प्रकाशक– गोविंद भवन, कार्यालय– गीता प्रेस ,गोरखपुर।
6. दिव्य भगवत गीता आत्मा से परमात्मा तक–अशोक अग्रवाल।

7. गीता (जीवन जिए कैसे रू गीता कहे जैसे)––आचार्य श्री सुदर्शन जी महाराज।
8. यथार्थ गीता––स्वामी अड़गड़ानंद।
9. परिवर्तनशील समाज के लिए शाश्वत मूल्य (तत्वज्ञान तथा आध्यात्मिकता)––स्वामी रंगनाथानंद।